A Pratibha Spandan's Journal

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320-7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

संगीत का आधार स्तंभ: ताल की भूमिका और प्रभाव

Anand Kumar[1], Prof. Praveen Uddhav[2]

1 Research Scholar, Department of Instrumental Music, Faculty of Music and Performing Arts, Banaras Hindu University, Varanasi
2 Supervisor, Professor, Department of Instrumental Music, Faculty of Music and Performing Arts, Banaras Hindu University, Varanasi

सारांश

संगीत के तीनो अंगो में ताल को सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त है। ताल ही संगीत में ऊर्जा का संचार करता है। तालविहीन संगीत श्रवण योग्य नहीं होता। समस्त सृष्टि के जीवधारी ताल से प्रेरित हैं, किसी भी कार्य को करने के लिए एक निश्चित लय की आवश्यकता होती है। अन्यथा असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है, जिस प्रकार अंतरिक्ष में सभी ग्रह नक्षत्र एक निश्चित गति में भ्रमण कर रहे है यदि उनकी गति में तनिक सा भेद हो जाये तो प्रलय आना निश्चित हो जायेगा। ताल के द्वारा संगीत में शृंगार रस, करुण रस, रौद्र, विभत्स, शान्त आदि रसों का प्रादुर्भाव होता है, इन रसों की प्राप्ति के लिए ताल में विभिन्न गतियों की अहम भूमिका होती है। 'संगीत की आधार शिला ताल है, यह सर्वसम्मत मत है कि ताल के संयोग से गायन तथा नृत्य संगीत में प्राण स्थापित होता है। जिस प्रकार काल को जानने के लिए काल को काल खण्डों में विभाजित कर दिया गया, कालखण्डों को समझने के लिये मनुष्य ने वर्ष, मास, दिन, घण्टे, मिनट तथा सैकण्ड आदि में विभाजित किया है। उसी प्रकार मनुष्य ने अंक ज्ञान के पश्चात लय को मात्राओं के चक्र में बांध कर ताल का निर्माण किया, जिससे सम्पूर्ण संगीत का मापन नियमबद्धता से किया जा सके तथा इसी के आधार पर संगीत में विभिन्न प्रकार की रचनाएं की गयी है, संगीत रचनाओं का आधार ताल ही है।

मुख्य शब्द- *संगीत, ताल, वाद्य, लय, तबला।*

भूमिका

यद्यपि वाद्यों के चतुर्विध प्रकार ताल के अधीन है। जिनमें घन एवं अवनद्ध तो ताल प्रधान वाद्य है ही, किन्तु तत् तथा सुषिर, श्रेणी के वाद्यों का वादन भी ताल के अधीन है। तत् श्रेणी के वाद्यों में तार द्वारा स्वरोत्पत्ति वाले वाद्य आते हैं जिसके अन्तर्गत सितार, सरोद, इसराज, वायलिन आदि प्रमुख वाद्य आते हैं। इन वाद्यों पर बजने वाली बन्दिशें ताल में बँधी होती हैं। सितार पर बजने वाले झाले के साथ तबले पर द्रुत तीनताल की संगत तथा लग्गी-लड़ियों का प्रयोग सितार वादन के सौन्दर्य में अभूतपूर्व वृद्धि करते हैं। इसके पश्चात् सुषिर वाद्यों की श्रेणी में फेंक एवं वायु के दबाव से उत्पन्न स्वरोत्पत्ति वाले वाद्य आते हैं। जिनमें बाँसुरी, हरमोनियम, शहनाई आदि वाद्य आते हैं। इन वाद्यों का वादन भी ताल के बिना अधूरा है। इन वाद्यों पर बजने वाली सभी वादन सामग्रियों ताल में लिपिबद्ध होती हैं। ताल के बिना इन वाद्यों में सौन्दर्य एवं रसपूर्ण वादन की कल्पना करना निरर्थक है। घन श्रेणी के वाद्य पूर्णतः ताल वाद्य हैं जिनका कार्य लय एवं ताल की गणना करना है।

ताल की उत्पत्ति के विषय में डा० अरुण कुमार सेन का मत है कि साहित्य में छन्द का एवं संगीत में ताल का जन्म स्वाभाविक रुप में हुआ होगा। आदि मानव ने कल-कल नदियों में, निर्झरों के शाश्वत प्रवाह में, क्रमिक सूर्योदय व सूर्यास्त में, ऋतुओं के नियमित चक्र में, जीवन के क्रमिक विकास में इन्ही छन्दों या तालों का अनुभव किया होगा।

संगीत का आधार स्वर तो हैं, परन्तु किसी राग का विस्तार, आलाप, तान, बोलतान, सरगम आदि लय के विविध रुपों पर ही आधारित रहता है। बिना लय के स्वर विस्तार में न तो श्रोताओं को ही आनन्द मिलता है और न ही वह पूर्ण संगीत ही कहा जा सकता है। यदि लय विहीन स्वर विस्तार को संगीत कहा जा सकता होता तो कोयल की कूक को भी संगीत की संज्ञा दी गई होती। अतः लय विहीन स्वर संगीत कला की सृष्टि से अधूरी रह जाती है।1

'संगीत रत्नाकर' में ताल शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार कही गई है

''तालस्तलप्रतिष्ठायामिति धातोर्घवि स्मृतः।

गीतं वाद्यं तथा नृत्तं यतस्ताले प्रतिष्ठितम।।''[2]

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320-7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

अर्थात प्रतिष्ठा अर्थ वाली 'तल' धातु में 'धञ' प्रत्यय लगने पर ताल शब्द बनता है। गीत, वाद्य और नृत्त इसमें प्रतिष्ठित होते है। यहाँ पर प्रतिष्ठा. का अर्थ व्यवस्थित करना, एक सूत्र में बाँधना, आधार प्रदान करने से है, अर्थात गीत, वाद्य एवं नृत्त के विभिन्न तत्वों को व्यवस्थित या आधार प्रदान करने वाला ताल ही है। संगीत मकरन्द, संगीत चूडामणि एवं संगीत दर्पण आदि ग्रन्थों में भी ताल की व्युत्पत्ति इसी प्रकार कही गई है -

''तालशब्दस्य निष्पत्तिः प्रतिष्ठार्थिन धातुना।

गीत वाद्यं च नृत्यं च भाति ताले प्रतिष्ठितम।।''[3]

पं0 दामोदर मिश्र ने 'संगीत दर्पण' में ताल की उत्पत्ति के विषय के बारे में लिखा है कि

तकारः शंकरः प्रोक्तो लकारः पार्वती स्मृता।

शिव शक्ति समायोगात ताल इत्याभिधीयते।।[4]

भारतीय संगीत के प्राचीन श्रेष्ठतम शास्त्रकार आचार्य भरत और शारंग्देव है इन दोनो ने ही ताल की परिभाषा अपने-अपने ग्रन्थो में की है। भरत ने लयाधित कला और पात (निःशब्द और सःशब्द) द्वारा परिच्छेदित काल के प्रमाण को ताल माना है। आचार्य शारंग्देव ने लघु, गुरु, प्लुत आदि के माप द्वारा काल का परिच्छेदन किया है। यह अन्तर काल-मापन विधि में देखने को मिलता है।

''संगीत रत्नाकर'' के लगभग सौ वर्ष पश्चात् लिखा गया ग्रन्थ आचार्य सुधाकलश का ''संगीतोपनिषद्सारोद्धार'' है। इन्होने भी संभवतः जैसे आचार्य पार्श्वदेव के ग्रन्थ को आधार मानकर ही यह ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ में ताल विषयक महत्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध है। आचार्य सुधाकलश ने ताल की परिभाषा निम्नवत् दी है-

''कालमान करस्तालः चतुर्था स द्रुतादिभि कालप्रमाण कृतास्ताल मूलं हुतालयः अत उच्चकरणेऽमीषां कालोलगति तन्मितः।'' [5]

काल का मापन करने वाला तथा उसके प्रमाण को निश्चित करने वाला ताल है, ऐसा आचार्य सुधाकलश ने कहा है, परन्तु ताल के मूल तत्व गुरु, द्वत, लघु और प्लुत है उन्ही के आधार पर ताल का मापन होता है। यह परिभाषा ''संगीतरत्नाकर'' के पाँचवें अध्याय के तीसरे श्लोक में दी गयी परिभाषा के समान है।

ताल की परिभाषा देते हुए अभिनव गुप्त [6] ने कहा है-

''क्रियाविशेषावच्छेदाद दो नियमोऽनुवर्तमानः स्थिर शीघ्रमध्यरुपो लयस्ताल इति।''

अर्थात- क्रियाओं के विशेष समूहों के निश्चित क्रम की नियमानुसार यदि पुनरावृत्ति हो, तभी ताल का निर्माण होता है। अतः विशिष्ट क्रियाओं के निश्चित नियम एवं क्रमबद्धता के आधार पर बना कालखण्ड ही ताल कहलाता है। किन्तु इसे क्रियाओं के निश्चित नियम के अनुसार दोहराया जाना आवश्यक है।

अमरकोष में- 'पं0 अमर सिंह' ने ताल को परिभाषित करते हुये कहा है-

''तालः काल क्रिया मान लयः'' [7]

अर्थात काल-क्रिया के मान को 'ताल' कहते है।' उपर्युक्त व्याख्याओं में हस्त-क्रियाओं के बारे में उल्लेख नही है, किन्तु हस्त-क्रियाएँ, 'ताल' व्यक्त करने के लिए आवश्यक होने से कुछ विद्वानो ने ताल की कुछ व्याख्याओ का वर्णन किया है।

'संगीत चिन्तामणि' में वर्णित 'ताल' का शब्दार्थ है- हाथ से आघात देना अथवा ऊंगलियों को सिकोड कर या फैलाकर विधित करना। ''ताल'' शब्द एवं निःशब्द के विशेष योग से बनती है, जो काल विभाजन क्रियारुप एवं दृव्य आत्मा है। इस परिभाषा में सर्वाधिक महत्वपूर्ण शब्द 'क्रिया' है।

विद्वानो ने ताल विहीन संगीत को 'आरण्यक' संगीत की संज्ञा दी है, इसलिए ताल के बिना समस्त कालचक्र अस्थिर सा प्रतीत होता है। बिना ताल के केवल स्वरों का आनन्द हृदय में उल्लास व उत्तेजना का सृजन करने में असमर्थ होता है एवं अनिबद्ध संगीत के निरन्तर श्रवण से हृदय में

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320-7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

उदासीनता छा जाती है। ताल संगीत को प्रतिबन्धित कर, रचना में क्रमबद्धता उत्पन्न करता है। ताल युक्त संगीत ही श्रोताओं को सोन्दर्यानुभूति कराने में सक्षम है। 'ताल' संगीत में विभिन्न सौन्दर्यपूर्ण चलन शैलियों का विकास करता है।

ताल के द्वारा ही लयगति में विभिन्नता उत्पन्न कर विभिन्न रसों की निष्पत्ति की जाती है। लय संगीत में प्राण प्रतिष्ठा का कार्य करती है। ताल के अन्दर लय समाहित होती है, और यही लय तत्व उसे गत्यात्मकता प्रदान करती है।

ताल संगीत को नियमबद्ध करके संगीत में अनुशासन तथा सुगठित रुप प्रदान करता है. जिससे श्रोताओं को चमत्कारिक सौन्दर्यानुभूति का अनुभव होता है, किसी भी संगीत रचना का सौन्दर्य बोध ताल के प्रयोग से ही होता है, ताल संगीत की कलात्मक एवं कल्पनाशील क्रियात्मक कला है, इसलिये बिना ताल वादन के गीतादि की शुद्धि या सिद्धी सार्थक नहीं होती, अतः संगीत में ताल की महत्ता, सदैव विद्यमान रहती है।

संगीत में ताल एक प्रतिबन्ध का कार्य करता है, संगीत के तीनो अंगों में ताल की महत्ता सर्वश्रेष्ठ है। जिस प्रकार समस्त सृष्टि क्रम में एक स्वाभाविक ताल व्यवस्था अर्थात काल की 'नियमितता' दृष्टिगोचर होती है, उसी प्रकार संगीत के क्षेत्र में मानव द्वारा की गयी ताल व्यवस्था सांगीतिक काल की नियमितता की सूचक होती है। यह नियम ही आनन्द एवं सौन्दर्य का सृजन करता है इसके अभाव में कोई सार्थकता एवं कोई सौन्दर्य नहीं रह जाता। ताल संगीत की संजीवनी शक्ति है। ताल संगीत में स्फूर्ति प्रदान कर श्रोताओं के मन को प्रफुल्लित करता है। श्रोतागण ताल की आवृत्तियों में खोकर अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करते है। तालविहीन संगीत के निरन्तर श्रवण से हृदय में उदासीनता छा जाती है परन्तु ताल प्रमाण में निबद्ध होकर संगीत श्रवण प्रिय हो जाता है। इस दृष्टिकोण से संगीत शास्त्र को प्रमाणिक रुप देने में ताल का अत्यधिक महत्व है।

प्रत्येक ताल की कुछ निश्चित मात्राएं बोल व विभाग होते हैं, जिनके द्वारा तालबद्ध गीत रचना करने और मुखड़ा उठाने में सहायता मिलती है। गाने में या बंदिश में ताल के वजन से जान आती है। ताल के वजन का ज्ञान होना आवश्यक है। जिस प्रकार प्रत्येक राग का अपना व्यक्तित्व है, उसी प्रकार प्रत्येक ताल का भी अपना व्यक्तित्व है। भिन्न-भिन्न गायन शैलियों के लिए भिन्न-भिन्न तालों की रचना हुयी है। जिस प्रकार मनुष्य के शरीर में यदि प्राण-तत्व का अभाव हो जाए तो वह निर्जीव सा होने लगता है, उसी प्रकार सगीत में ताल का अभाव हो जाने से संगीत भी निष्प्राण होने लगता है। इसलिये ताल और संगीत का मेलजोल देखते हुये हम कह सकते हैं कि ताल ही संगीत का प्राण है।

आज हम जितनी भी मध्यकालीन और आधुनिक बंदिशें या रचनाएं गाते हैं, वे सभी तालों में निबद्ध हैं। तालबद्ध होने के कारण ये रचनाएं अपने मौलिक रूप में जीवंत एवं अक्षुण्ण बनी हुयी है, और आज भी गाये जाने पर वैसा ही आनन्दानुभूति की प्रतीति कराती हैं जैसा कि पूर्ववत कराती रही होगी। ख्याल गायकी में ताल का प्रभाव अत्यन्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि विलंबित एकताल, विलंबित झूमरा, विलंबित आड़ाचारताल, तिलवाड़ा तालों में गाने के लिये ताल में रहती हुयी मात्राओं पर भिन्न-भिन्न स्थान पर वजन होते हैं इस वजन को साधारण बोलों में ''ताली'' कहें तो उचित होगा। ख्याल गायकी में आलाप, मींड़ घसीट इत्यादि का उपयोग करने के लिये एक मात्रा तथा मात्राओं के विविध अंशों को अपनी-अपनी जगह कायम रखने के लिये ताल में रहती हुयी मात्राओं के गतिरुप लय का आश्रय लेना पड़ता है। वस्तुतः मुखड़ों को सफलतापूर्वक सम पर समाप्त करने के लिये ख्याल में विलंबित लय में, ताल में रहती हुयी मात्राओं के अंशों का असंख्य रीतियों से उपयोग किया जाता है। संसार के किसी भी संगीत में ''मुखड़े'' की प्रथा नहीं है जो हमारे संगीत में है। इसीलिये मुखडे अनेक रीतियों से लय-ताल में तैयार करके रखने की प्रथा हिन्दुस्तानी सगीत में है। स्फुरित संगीत होते हुये भी बँधी हुयी चीजों में रहते हुये बँधे मुखड़े अनेक रीति से गाने के कारण हमारा संगीत विविध रस एवं सौन्दर्य से परिपूर्ण है। ''मुखड़ों'' को अनेक रीतियों से सम पर लाने की क्रिया में, सम-विषम, अतीत-अनागत इत्यादि प्रकार के प्रयोग हिन्दुस्तानी संगीत में प्रचलित है।

बड़े ख्याल गाये जाने के पश्चात् अथवा अत्यन्त द्रुत लय में गाने के लिये रचा हुआ हिन्दुस्तानी संगीत का एक प्रकार तराना है। तरानों में सितार के बोलो के अतिरिक्त तबले तथा पखावज के बोल भी स्वरों में बँधे हुये रहते हैं। इस प्रकार तरानों में, विशेषतया अंतरे में तबले और पखावज के बोल रहते हैं। तबले के बोलों में मानो सुररुपी प्राण फूंककर संगीत में नावीन्य दिखाने के लिये यह प्रयोग हमारे हिन्दुस्तानी संगीत की एक विशेषता है। ताल प्रधान हमारा संगीत, सगीत में निहित ताल के स्थान एवं महत्व को तरानों की प्रथा द्वारा अधिक दृढ रीति से बताता है। संगीत में विभिन्न विधायें (गायन, वादन तथा नृत्य) तथा संगीत की विभिन्न शैलियां शास्त्रीय संगीत, उप शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत तथा लोक संगीत में ताल के प्रयोग की विशिष्ठ भूमिका है, शास्त्रीय संगीत की विधाओं में प्रयोग होने वाली तालों का प्रयोग उप शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत एवं लोक संगीत में किया जाता है, जैसे ख्याल गायकी में प्रयोग होने वाली ताले, तीनताल, अपताल, एकताल, रुपक, आड़ाचारताल, झूमरा, तिलवाड़ा आदि का

SWAR SINDHU
(National Peer-Reviewed/Refereed Journal of Music)
A UGC CARE listed Journal
ISSN 2320–7175 (O) | Volume 13, Issue 01, January-June, 2025
http://swarsindhu.pratibha-spandan.org © The Author(s) 2025

प्रयोग ख्याल गायकी एवं शास्त्रीय संगीत वादन तक ही सीमित रहता है, उप शास्त्रीय संगीत में प्रयोग होने वाली ताल दीपचन्दी, जतताल, पंजाबी, कहरवा, दादरा आदि तालों का प्रयोग ठुमरी दादरा तक ही सीमित है, एवं सुगम संगीत में भजन गीत एवं गजल में कहरवा, दादरा, रूपक, दीपचन्दी आदि तालों का प्रयोग किया जाता है। सांगीतिक संयम का अभावः कला एवं साहित्य में उत्कृष्ठता का परिचायक सत्यं-शिवमं सुन्दर है। कला में संयम के आधार पर ही शिव अथवा कल्याणकारी भावनाओं का विकास सम्भव होता है। संगीत में इस संयम का ताल के स्वरूप में प्रदर्शन होता है। आवश्यकतानुसार गीत, गत या नृत्य संगीत का ताल के द्वारा सन्तुलित करने की परम्परा प्राचीनकाल से रही है। संगीत का लय या ताल रुपी संयम ही यह नियन्त्रित करता है कि विलम्बित गायन वादन या नृत्य इतना अधिक विलम्बित न हो जाये कि रस निष्पत्ति असम्भव हो जाये और न इतना द्रुत हो जाये कि गति की चकाचौंध में कला का सौष्ठव नष्ट हो जाये। इसी नियन्त्रण के कारण सन्तुलित संयमित आलाप, तान, बोल आदि विभिन्न क्रियाओं की अभिव्यक्ति सम्भव होती है। प्राचीन गुरुजन गायकी शिक्षा देते समय आलाप अथवा तानों के लिए जिस संयम का शिष्यों को ज्ञान देते थे उसमें विलम्बित, अतिविलम्बित, मध्य, द्रुत आदि लयों के निश्चित स्वरूप एवं आवर्तनों का बडा महत्व था। फलस्वरूप मर्यादित संगीत-शैलियों में गायन-वादन का असंयमित प्रदर्शन नहीं हो पाता था और कला की प्रदर्शन रीतियों में प्रारम्भ से अन्त तक नवीनता, मौलिकता और शाश्वत सौन्दर्य का निर्वाह होता था। अतएव संगीत में संयम की रक्षा हेतु ताल का भी महत्वपूर्ण स्थान है।

गति भेद एवं रस निष्पत्ति

संगीत में ताल की विभिन्न गतियों के द्वारा कलाकार अपने प्रदर्शन में अनेक रसों का निर्वाह करता है। जिस प्रकार साहित्य शास्त्र में छन्दों के द्वारा, नृत्य में भावों भंगिमाओं के द्वारा रसों को प्रदर्शित किया जा सकता है, उसी प्रकार शब्दों स्पष्टीकरण के अभाव में भी विभिन्न ताल तथा लय के द्वारा अनेक रसों का प्रदर्शन किया जा सकता है। गायक गायकी की प्रकृति के अनुसार ताल तथा लय का चुनाव कर रस- निष्पत्ति करने में समर्थ होता है। वाद्यों पर वादक गायन तथा नृत्य की संगति में खुले या बन्द बोल बजाकर एक निश्चित स्थान से गति भेद एवं विभिन्न लयकारियों द्वारा सौन्दर्य का निर्वाह करते हैं। जिससे श्रोतागण अनेक रसों की निष्पन्नता से भाव विभोर हो जाते हैं। इस प्रकार ताल के विभिन्न गति-भेदों के बिना रस निष्पत्ति असम्भव है।

संदर्भ

1. श्रीवास्वतव गिरीशचन्द्र, ताल परिचय भाग 2, इलाहाबाद: रूबी प्रकाशन, गुरुतेगबहादुर नगर, पृ0 120
2. पाण्डेय, सुधांशु, तालप्राण, लखनऊ: सांस्कृतिक दर्पण, पृ0 2
3. संगीत पत्रिका, अप्रैल 2010, पृ0 15
4. गर्ग, लक्ष्मीनारायण (सम्पादक), संगीत तबला अंक, हाथरस: संगीत कार्यालय, पृ0 56
5. कुदेशिया, शोभा, प्राचीन ताल के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान तबलावादन, नई दिल्ली: राधा पब्लिकेशन, 2012, पृ0 8
6. अभिनवगुप्त कृत अभिनवभारती (नाट्यशास्त्र टीका), ताल अध्याय से वर्णित
7. डॉ0 श्रीवास्तव कविता, संगीत में ताल की ऐतिहासिकता, महत्व एवं आवश्यकता, नई दिल्ली: कनिष्क पब्लिशिंग हाउस, 2019, पृ0 14